पौधों में पादप कोशिका की स्फीति दशा को बनाए रखने में जल अत्यन्त महत्वपूर्ण है। पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी स्थलीय जीव - जन्तु व पौधे मृदा के माध्यम से जल की पूर्ति करते हैं।

मृदा जल

वर्षा का जल मृदा में जल का प्रमुख स्रोत है। वर्षा हो जाने के बाद ढलान के कारण कुछ जल बह जाता है इसे अपवाहित जल कहते हैं।

मृदा जल के प्रकार

क्षेत्रीय जल धारिता की मात्रा के अनुसार मृदा जल निम्न प्रकार के होते हैं :

1- केशिका जल: जो जल मृदा कणों के बीच उपस्थित छिद्रों, रूध्रों, नलिकाओं आदि में भरा होता उसे केशिका जल या प्राप्य जल भी कहते हैं।

2- आर्द्रता जल: वाष्प की अवस्था में मृदा कणो के चारो ओर पाए जाने वाले जल के अणु को आर्द्रता जल कहते हैं।

3- क्रिस्टलीय जल: मृदा के कणों में लवणों की सरंचना में उपस्थित जल जो रासायनिक रूप से संयुक्त रहता है, उसे क्रिस्टलीय जल कहते हैं। जैसे- $C_4S0_4.5H_20$ आदि ।

पौधों द्वारा जल का अवशोषण

शैवालों में जल का अवशोषण उनकी सभी कोशिकाओं द्वारा होता है इसी प्रकार ब्रायोफाइट्स में जल अवशोषण एककोशिकीय या बहुकोशिकीय संरचनाओं से होता है, जिसे मूलाभास कहते हैं।

- टेरिडोफाइट्स, अनावृतबीजी व आवृतबीजी पौधों में यह कार्य जड़ों द्वारा होता है।
- जल का अवशोषण जड़ों के मूलरोम क्षेत्र द्वारा होता हैं।

जड़ के भागों को निम्नलिखित चार प्रदेशों में बाटा जा सकता है।

1- **मूल गोप** : यह छोटी व टोपीनुमा सरंचना है जो जड़ के अगले सिरे पर स्थित होती है। यह जल के सिरे पर स्थित कोमल कोशिकाओं को नष्ट होने से बचाती है।

2- **कोशिका निर्माण प्रदेश** : यह मूलगोप के ठीक पीछे स्थित होता है। इनकी कोशिकाएँ लगातार कोशिका विभाजन के द्वारा नई कोशिकाओं का निर्माण करती है।

3- **कोशिका - विवर्धन प्रदेश** : यह कोशिका निर्माण प्रदेश के पीछे फैला रहता है। इनमें लम्बाई में वृद्धि होती रहती है।

4- **कोशिका - विभेदन** : यह कोशिका विवर्धन प्रदेश के पीछे स्थित होता है। इस प्रदेश की बाह्य परत की कोशिकाएँ मूल रोमो का निर्माण करती है जो भूमि से जल का अवशोषण करते हैं।

जल अवशोषण की क्रियाविधि

ये निम्न दो प्रकार से होते है

1- सक्रिय जल अवशोषण : ये तब होता है जब वाष्पोत्सर्जन धीमी गति से होने लगता है और मृदा में जल की मात्रा अधिक होती है। यह भी दो प्रकार से होता है।

a) **परासरणीय जल अवशोषण** : सबसे पहले मुलरोमो की भित्ति मृदा के विलयन में उपस्थित जल का अन्तः शोषण करती है तथा जल परासरण द्वारा मूलरोम में पहुंचता है तो मूलरोम स्फीति दशा में आ जाते हैं व इनका परासरण दाब कम हो जाता है।

- इसी कारण जल मूलरोम के पास स्थित वल्कुट की कोशिका में चला जाता है।
- इसके बाद जल परिंभ कोशिका में चला जाता है यहां से जल जाइलम कोशिका में पहुंच जाता है।
- इस विधि द्वारा जल जीवित कोशिकाओं के जीवद्रव्य से विसरण दाब न्यूनता की प्रवणता के कारण अंत में जाइलम की निर्जीव कोशिका तक पहुंच जाता है।

(b) **परासरणविहीन जल अवशोषण** : इसमें ऊर्जा की जरूरत होती है। ऊर्जा का उपयोग करके जड़ो की की वल्कुट कोशिकाएँ जल को मृदा विलयन से खींचकर, जाइलम वाहिका में पहुंचाती है।

2- **निष्क्रिय जल अवशोषण** : यह वाष्पोत्सर्जन क्रिया के कारण होता है। निष्क्रिय जल अवशोषण की क्रिया में जड़ की कोशिकाएं निष्क्रिय बनी रहती हैं। इसमें पत्तियों के जाइलम रस में तनाव उत्पन्न होता है जो जड़ के है जाइलम रस तक जाता है और वहां एक चूषण दाब उत्पन्न होता है जिस कारण जल मूलरोमो से होता हुआ जाइलम में आता रहता है।

जल अवशोषण को प्रभावित करने वाले कारक

1- **प्राप्य भूमि जल** : मृदा में कोशिका जल पौंधे के लिए उपयोगी है। यह जल उस भूमि की क्षेत्रीय जल धरिता तथा स्थाई ग्लानि प्रतिशत के बीच की मात्रा होती है।

2- **मृदा का तापमान** : पर्यापत जल अवशोषण के लिए 20° c से 30°c तापमान की जरूरत होती है।

3- **मृदा विलयन की सान्द्रता** : यदि मृदा विलयन की सान्द्रता अधिक हो तो जड़ों द्वारा जल का अवशोषण कठिन हो जाता है।

यदि मृदा के विलयन की सान्द्रता मूलरोम के रिक्तिका रस की सान्द्रता की तुलना में कम मात्रा में होती है तो यह प्रक्रिया आसान होती है।

4- **मृदा की आयु** : जड़ो की कोशिकाओं को जीवित रहने के लिए श्वसन की आवश्यकता होती है अतः मृदा की वायु एक महत्वपूर्ण कारक है।

गैसों का अवशोषण

पौधों में O_2 व CO_2 का विसरण : पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में CO_2 गैस रुध्रों द्वारा पत्तियों मे जाती है और आक्सीजन पत्तियों से बाहर निकलती है। अधिक सिंचाई या वर्षा के कारण मृदा जलक्रान्त हो जाती है क्योंकि (O_2) ऑक्सीजन का विसरण रुक जाता है। नाइट्रोजन को पौधे भूमि के नॉइट्रेट्स के रूप में प्राप्त करते हैं।

पोषक पदार्थों का अवशोषण

पोषण : जन्तु व पौधे अपने विभिन्न कार्यों को करने के लिए पोषण का उपयोग करते हैं। पोषण के फलस्वरूप ऊर्जा उत्पन्न होती है।

ऊर्जा का उपयोग शरीर की अन्य क्रियाओं को करने में किया जाता है।

पोषण की विधियों के आधार पर पौधे दो प्रकार होते हैं-

1- **स्वपोषित पौधे**: ये पौधे अपने कार्बनिक भोज्य पदार्थ स्वयं बनाते हैं। ये प्रकाश संश्लेषण द्वारा भोज्य पदार्थों का निर्माण करते हैं।

2- **परपोषित पौधे** : इस वर्ग के पौधे भोज्य पदार्थ का निर्माण स्वयं नहीं करते क्योंकि इनमें पर्णहरिम नहीं पाया जाता। ये स्वपोषित पौधों द्वारा बनाए गए कार्बनिक भोज्य पदार्थों का प्रयोग करते हैं जैसे - जीवाणु, कवक आदि।

अधिपादप : कुछ पौंधो में पर्णहरिम होता है। ये अपना भोजन तो स्वयं बनाते हैं लेकिन जल तथा खनिजों के लिए पोषण पर निर्भर होते हैं। इन पौधों को अधिपादप कहते हैं।

परपोषी पौधों के प्रकार

ये निम्न प्रकार के होते हैं -

1- **परजीवी पौधे**: ऐसे पौधे अपना भोजन जीवित पौधों या जन्तुओं से प्राप्त करते हैं। भोजन प्राप्त करने के लिए इन पौधों में परजीवी मूल पाया जाता है। आवृतबीजी परजीवी पौधों को निम्न दो भागों में बॉटा
गया है:-

a) **पूर्ण परजीवी पौधे** : इनमें पर्णहरिम नहीं होता अत: ये पौधे दूसरे पौधों से अपना भोजन प्राप्त करते हैं। ये निग्न दो प्रकार के होते हैं -

- (i) पूर्ण स्तम्भ परजीवी : अमरबेल एक दुर्बल तने वाला पूर्ण स्तम्भ परजीवी है। इसका तना पोषद के चारों ओर लिपटा होता है और खनिज लवण व जल का अवशोषण करते हैं।
- (ii) पर्ण मूल परजीवी : ये अन्य पौधों के मूल से भोजन प्राप्त करते है जैसे- रैफ्लेसिया ।

(b) **अपूर्ण परजीवी**: ये पौधे पोषक पौधे से कुछ पदार्थों का अवशोषण करके भोजन प्राप्त करते हैं। ये
भी निम्न दो प्रकार के होते हैं-

- (i) अपूर्ण स्तम्भ परजीवी : इनमें पर्णहरिम होता है ये अपना भोजन स्वयं बनाते हैं उदा - विस्कम, लोरेंयस आदि।
- (ii) अपूर्ण मूल परजीवी : इनमें पर्णहरिम होता है। प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा स्वयं भोजन बनाते हैं। जैसे चन्दन का पौधा ।

2- **मृतोपजीवी पौधे** : ये अपना भोजन मृत एवम सड़े गले जीवों से प्राप्त करते हैं। जैसे- कवक, कुछ जीवाणु, आवृतबीजी पौधे आदि।

3- **सहजीवी पौधे** : जब दो पौधे परस्पर एक-दूसरे को लाभ पहुंचाते हैं। तो उनके इस सम्बन्ध को सहजीवन कहते हैं तथा इन पौधों को सहजीवी पौधे कहते है। लाइकेन सहजीवन का उदाहरण है। इसमें घटक के रूप में एक शैवाल व एक कवक होता है। अन्य उदा- कवक मूल, लेग्यूम राइजोबियम सहजीविता हैं।

4- **कीट भक्षी पौधे** : ये भूमि में पाए जाते हैं व स्वपोषित होते हैं। इनमें नाइट्रोजन की कमी पाई जाती है। जैसे दलदल भूमि। ये पौधे कीटों को पकड़ते हैं तथा उनका पाचन करते हैं।

ढलैडर वर्ट या युट्रिकुलेरिया: यह एक छोटा जलीय कीटभक्षी पौधा है। इनमें रोगों द्वारा जल के अवशोषण से ब्लैडर के अन्दर जल का दवाब कम हो जाता है। कीट ब्लैडर के अन्दर पहुँच जाते हैं जिनका अपघटन हो जाता है। इसके फलस्वरूप नाइट्रोजनी पदार्थ ब्लैडर कोशिकाओं द्वारा अवशोषित हो जाते हैं।

कोशिकीय परिवहन

कोशिका में घटित होने वाली सभी क्रियाएँ झिल्लियों से सम्बन्धित होती है। झिल्लियों द्वारा पदार्थों का परिवहन निम्न प्रकार से होता है-

विसरण : इसमें ऊर्जा की आवश्यकता नहीं होती। यह एक भौतिक क्रिया है। विसरण की क्रिया में पदार्थ के अणु उच्च सान्द्रता से निम्न सान्द्रता वाले क्षेत्रों की ओर स्वतः गति करते हैं। पौधों के लिए विसरण अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

पादप-जल सम्बन्ध: पौधो के लिए जल अत्यन्त महत्वपूर्ण है । पौधे प्रतिदिन अधिक मात्रा में जल को ग्रहण करते हैं परन्तु पत्तियों से यह अधिक मात्रा में वाष्पोत्सर्जन द्वारा हवा में उड़ जाता है।

परासरण

परासरण में विलायक के अणु अधिक सान्द्रता से कम सान्द्रता की ओर अर्धपारगम्य झिल्ली द्वारा तब तक गति करते हैं जब तक दोनों माध्यमों की सान्द्रता एकसमान न हो जाए।

परासरण के प्रकार : यह निम्नलिखित दो प्रकार का होता है।

1- **बहि: परासरण एवम जीवद्रव्यकुंचन** : जब किसी पादप कोशिका को ऐसे विलयन में रखें जिसका परासरण दाब रिक्तिका रस के परासरण दाब के बराबर हो तो कोशिका की आकृति में कोई परिवर्तन नहीं होता। यदि अतिपरासरी विलयन में कोशिका को रखा जाय तो कोशिका की रिक्तिका रस से जल निकलकर बाहर के विलयन की ओर जाने लगता है जिसे बहिःपरासरण कहते है जिससे जीवद्रव्य संकुचित हो जाएगा। कोशिका के तनाव में कमी आएगी इसे ही जीवद्रव्यकुंचन कहते हैं।

2 - **अन्तः परासरण एवं जीवद्रव्य- विकुंचन** : जब किसी अधोपरासरी विलयन में ऐसी कोशिका को रखे जिसमें जीवद्रव्यकुंचन हो चुका हो तो प्रसारण के नियम से जल के अणु बाहर के विलयन से कोशिका के रिक्तिका रस की ओर अधिक मात्रा में जाने लगते हैं। इस क्रिया को अंत: परासरण कहते हैं। कोशिका तनाव में आ जाती है। इसी घटना को जीवद्रव्य - विकुंचन कहते हैं।

जल का परिवहन या रसारोहण

पौधों में जल तथा उसमें घुले हुए लवणों के मूलरोम से पत्तियों तक पहुंचने की क्रिया को रसारोहण कहते हैं।

रसारोहण की क्रियाविधि

इस संबंध में अनेक विचारधाराएं प्रस्तुत हैं जो निम्नवत है -

1. जैव शक्ति वाद
2. भौतिक शक्ति वाद
3. मूल दाब वाद

1- **जैव शक्ति वाद**: वेस्टमीयर इसमें विश्वास रखने वाले प्रथम व्यक्ति थे । इस अनुसार पौधो के तनों में जाइलम पेरेनकाइमा को कोशिकाएं जीवित होती है।

2- **भौतिक शक्ति वाद** : इसके अन्तर्गत निम्न वाद आते हैं -

(a) **अन्तः शोषण वाद** : इस अनुसार रसारोहण की क्रिया जाइलम अवयवों की मोटी भित्ति द्वारा अन्तःशोषण बल के कारण होता है। इस मत को अमान्य कर दिया गया

(b) **फेशिका बल मत** : यह मत बोहम ने दिया इसके अनुसार जाइलम की वाहिकाएं एक के ऊपर एक व्यवस्थित रहती है और इनमें उत्पन्न पृष्ठ तनाव के कारण जल स्वतः ऊपर चढ़ जाता है। यह मत भी अमान्य है।

(c) **वाष्पोत्सर्जन- जलीय मत**: यह सर्वाधिक मान्य मत है। इसे 1999 में डिक्सन व जॉली ने प्रस्तुत किया रेनन, क्लार्क व कर्टिस ने इसका समर्थन किया। यह वाद निम्न मुख्य बातों पर आधारित है:

- **वाष्पोत्सर्जन खिंचाव या तनाव:** लगातार वाष्पोत्सर्जन होता है जिस वजह से पर्णमध्योतक कोशिकाओं का जल विसरण द्वारा अंतरकोशिकीय अवकाशों में जाता रहता है और कोशिकाओं का कोशिका रस गाढ़ा हो जाता है। चूषक बल व तनाव बढ़ता रहता है। यह प्रभाव धीरे- धीरे जाइलम वाहिकाओं तक पहुंच जाता है वहां से पानी का खिंचना शुरू हो जाता है। यह तनाव वाष्पोत्सर्जन के कारण होता है इसलिए इसे वाष्पोत्सर्जन खिचांव कहते हैं।
- **ससजंक बल या जल का तनन सामर्थ्य:** डिक्सन व जॉली का कहना था कि जल मृदा से अवशोषित होकर वाष्पोत्सर्जन खिचाव के कारण पौधों

की ऊंचाई तक चढ़ता रहता है। जल की धारा नहीं टूटती है इसका कारण जल के अणुओ के बीच प्रबल पारस्परिक आकर्षण या ससंजन का होना है। इसी तरह वाहिकीय भित्तियां व जल के अणुओ के बीच जो आकर्षण होता है उसे आसंजन कहते हैं। ससंजन व आसंजन के ही कारण जल स्तम्भ अटूट बना रहेगा है इसे तनन सामर्थ्य कहते हैं।

3- **मूलदाब वाद:** वह दाव है जो जड़ों की उपापचयी क्रियाओं के कारण जाइलम की वाहिकाओं एवं वाहिनिकाओं पर पड़ता है।

मूलदाब शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम स्टीफन हेल्स ने 1727 में किया था।

वाष्पोत्सर्जन

वायवीय भागों में विशेष रूप से पत्तियों द्वारा जल की वाष्प के रूप में हानि को वाष्पोत्सर्जन कहते है।

वाष्पोत्सर्जन निम्न प्रकार का होता है -

1- **रुध्रीय वाष्पोत्सर्जन** : यह रूद्धों द्वारा होता है। रूध्र पत्तियों की निचली सतह पर उपस्थित छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इन्हीं रूध्रों से जल वाष्प के रूप में विसरित होकर वातावरण में जाता है इसे ही रुन्ध्रिय वाष्पोत्सर्जन कहते हैं। लगभग 80 - 90 % जल का वाष्पोत्सर्जन रूध्रों द्वारा होता है।

2- **उपत्वचीय वाष्पोत्सर्जन** : वाह्य त्वचा के ऊपर उपस्थित उपत्वचा द्वारा होने वाले वाष्पोत्सर्जन को उपत्वचीय वाष्पोत्सर्जन कहते हैं। यह बहुत कम (लगभग 3-9%) पौधों में होता है।

3- **वातरन्ध्रीय वाष्पोत्सर्जन** : वातरन्ध्र कांठीय पौधो के तनो में पाए जाते हैं। वातरूध्रों के द्वारा जल की कुछ मात्रा का वाष्पीकृत होना वातरूध्रीय वाष्पोत्सर्जन कहलाता है। यह वाष्पोत्सर्जन भी पौधों
में बहुत कम (लगभग 0.1%) होता है।

रूध्र की संरचना

पौधो की पत्तियों और अन्य कोमल वायवीय भागों की बाह्य त्वचा में छिद्रयुक्त तथा दो द्वार कोशिकाओं से घिरी संरचनाएं पाई जाती है जिन्हे रूध्र कहते हैं।

- ये द्वार कोशिकाएं जीवित होती हैं इनमे जीवद्रव्य हरितलवक व केन्द्रक पाए जाते हैं।
- द्वार कोशिकाओ के बाहर बाह्य त्वचा कोशिकाएं होती हैं जिन्हे गौण कोशिकाएं ये सहायक कोशिकाएं कहते हैं।

रूध्र के खुलने व बन्द होने की क्रियाविधि

कोशिका का स्फीति दशा में होने पर रूध्र के छिद्र खुल जाते हैं क्योंकि इस स्थिति में द्वार कोशिकाओं की वाह्य पतली भित्ति बाहर की ओर फैल जाती है तो अन्दर वाली भित्ति खिंचकर बाहर की ओर जाती है और रूध्र का छिद्र खुल जाता है।

- जब द्वार कोशिका में श्लथ दशा उत्पन्न हो जाती है तो अन्दर की भित्ति अपने पूर्व स्थान पर आ जाती और रूध्र का छिद्र बंद हो जाता है।
- इस प्रकार रंध्रो का खुलना व बन्द होना द्वार कोशिकाओं की स्फीति दशा एवं श्लथ दशा पर निर्भर करती है।

वाष्पोत्सर्जन पर प्रभाव डालने वाले कारक

इन कारकों को दो समूहों में बांटा गया है -

a) बाहरी कारक :

1- प्रकाश: प्रकाश की उपस्थिति में प्रकाश संश्लेषण होता है जिससे रूध्र खुले रहते है और वाष्पोत्सर्जन अधिक होता है। इसके विपरीत अंधेरे में रूद्र बन्द रहते है और वाष्पोत्सर्जन कम हो जाता है।

2- वायुमण्डल की आर्द्रता: आर्द्रता के अधिक होने पर वाष्पोत्सर्जन कम तथा आर्द्रता के कम होने पर वाष्पोत्सर्जन अधिक हो जाता है।

3- तापमान: ताप के बढ़ने से वाष्पोत्सर्जन की दर बढ़ती है तथा ताप के घटने पर वाष्पोत्सर्जन की दर घटती है।

4- वायु: वायु की गति बढ़ने पर रूध्र खुलते हैं तथा वाष्पोत्सर्जन की दर बढ़ती है लेकिन अधिक तीव्र वायु में रूध्र बंद हो जाते हैं।

b) आन्तरिक कारक :

1- **पत्तियों की रचना:** पत्तियों की रचना का भी वाष्पोत्सर्जन पर प्रभाव पड़ता है। वाष्पोत्सर्जन काम करने के लिए मरुस्थलीय पौधों में पत्तियों में विभिन्न प्रकार के अनुकूलन पाए जाते हैं इसे पर्णाभ स्तम्भ कहते हैं। जैसे : नागफनी में पत्तियां काटों में बदल जाती हैं तथा तना चपटा व मांसल हो जाता है।

2- **विन्दुस्रावण:** इसमें कुछ शाकीय पौधे जैसे घुइयां जौ आदि अपनी पत्तियों के किनारे बूंदों के रूप में जल हानि करते हैं। इन पर शिरिकामो के छोरों पर

छोटे- छोटे छिद्र होते हैं जिन्हें जलरन्ध्र कहते हैं। जलरंध्रो से होने वाली जल हानि को विन्दुस्राव कहते हैं।

3- **खनिज लवणों का अन्तर्ग्रहण:-** घुलनशील अवस्था में अनेक खनिज पदार्थ मिट्टी में उपस्थित रहते हैं। जल तथा खनिज पदार्थों के अवशोषण की क्रियाएं एक - दूसरे से स्वतंत्र तथा अलग रहती हैं। सभी खनिजों का जल द्वारा निष्क्रिय अवशोषण नही हो सकता है।

खनिज आयनों का सक्रिय एवं निष्क्रिय अवशोषण मिट्टी के अन्दर जड़ द्वारा होता है।

जाइलम द्वारा खनिज लवणों का स्थानांतरण

जब सक्रिय तथा निष्क्रिय अन्तर्ग्रहणों द्वारा खनिज आयन जाइलम में पहुंचते हैं तो प्रवाह द्वारा परिवहन वाष्पोत्सर्जन होता है। खनिज तत्वों का उपयोग पौधों के वर्धी भागों जैसे- शीर्षस्थ व पाश्विर्य विभज्योतकों, तरुण पत्तियों फलों एवं बीज में होता है।

फ्लोएम द्वारा परिवहन:- पौधे के एक भाग से दूसरे भागों में खाद्य पदार्थ के जलीय परिवहन को खाद्य पदार्थों का स्थानान्तरण कहते हैं। यह परिवहन फ्लोएम द्वारा होता है।

- फ्लोएम की चालनी नलिकाओं से होने वाले खाद्यय पदार्थों का स्थानान्तरण ऊपर व नीचे की ओर दोनो तरफ द्विदिशीय होता है।
- जाइलम से होने वाले परिवहन से यह भिन्न है क्योंकि जाइलम जल का प्रवाह एकदिशीय होता है।
- जल एवं सुक्रोज फ्लोएम रस का निर्माण करते हैं।

दाब जनित प्रवाह परिकल्पना या मात्रात्मक प्रवाह परिकल्पना :

यह सन् 1927 में मुंच द्वारा प्रस्तुत किया गया यह खाद्य पदार्थों के स्थानान्तरण के लिए सर्वाधिक मानी परिकल्पना है।

- यह परिकल्पना समझने के लिए मुच ने भौतिक प्रयोग प्रस्तुत किया। इसे दो बल्ब प्रयोग भी कहते हैं।
- इसके लिए मुंच ने अर्धपारगम्य झिल्ली से बने दो बल्ब A व B लिए जो 4 आकार की नली से आपस में जुड़े रहते हैं।
- दोनो बल्ब परासरण तन्त्र की तरह कार्य करते है।
- बल्ब A में शर्करा का घोल व बल्ब B में जल भरते है। ये दोनों बीकर A तथा B नली के द्वारा जुड़े रहते हैं।
- कुछ समय पश्चात् बल्ब A से जल बीकर A में प्रवेश करता है। अत: बल्ब A में स्फीति दाब उत्पन्न होता है जिससे बल्ब A, 4 नली से होकर बल्ब B की ओर गति करता है तथा बीकर B से जल + नली से होता हुआ बीकर A में आ जाता है।
- शर्करा अणुओं का स्थानान्तरण निरन्तर बल्ब A से बल्ब B में होता रहता है।
- मुंच ने बल्ब A की तुलना पत्तियों से की है जहाँ प्रकाश संश्लेषण द्वारा खाद्यय पदार्थों का निर्माण होता है जो फ्लोएम की चालनी नलिकाओं द्वारा पहुंचाया जाता है बल्ब B में जहां पहुंचकर खाद्य पदार्थ श्वसन में प्रयुक्त होते है या स्टार्च के रूप में संचित कर लिए जाते हैं। जल जड़ों से जाइलम वाहिकाओं द्वारा पत्तियों को पहुंचाते है जो प्रकाश संश्लेषण में प्रयुक्त होती है।

- शेष जल को वाष्पोत्सर्जन द्वारा पौधे से बाहर निकाल देते हैं। मुंच ने पत्तियों के जाइलम पेरेनकाइमा की तुलना बीकर A से और जड़ो के जाइलम पेरेनकाइमा की तुलना बीकर B से की है।